तलाक़ क्यों और कैसे?

डॉ० मुफ़्ती मुहम्मद फ़हीम अख़्तर नदवी
अनुवाद
मुहम्मद आबिद हामिदी
नज़रसानी
नसीम ग़ाज़ी फलाही

विषय-सूची

☆	दो शब्द	4
☆	तलाक़ क्यों और कैसे?	5
☆	तलाक़ का मामला	5
☆	तलाक़ से पहले	6
☆	तलाक़ मत दीजिए	9
☆	अगर मियाँ-बीवी में इख़्तिलाफ़ हो जाए तो?	11
☆	अलग होने के लिए सिर्फ़ एक तलाक़	14
☆	तलाक़ देने का तरीक़ा	15
☆	तीन तलाक़ का मसला	17
☆	तीन तलाक़ देने के बाद?	19
☆	तलाक़ देने का इख़्तियार किसे?	21
☆	तलाक़	21
☆	तफ़वीज़े-तलाक़	22
☆	ख़ुलअ	22
☆	फ़स्ख़	23
☆	कुछ बातें इद्दत के बारे में	23

'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

"अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान निहायत रहमवाला है।"

दो शब्द

इस्लाम अल्लाह का भेजा हुआ दीन है जो इनसान की पूरी ज़िन्दगी के लिए हिदायत और रहनुमाई है। इसी लिए उसने ज़िन्दगी के हर पहलू और हर भाग के लिए वाज़ेह तालीम दी है।

इस्लाम ने शादी-ब्याह के बारे में भी हिदायतें दी हैं और तलाक़ के बारे में भी। तलाक़ हालाँकि एक ना पसन्दीदा काम है लेकिन कुछ हालतों में यह ज़रूरी हो जाता है। इसी लिए दुनिया के हर मुल्क में तलाक़ के सिलसिले में क़ानून मौजूद हैं। जब मियाँ-बीवी के बीच किसी वजह से इतनी नफ़रत और दूरी हो जाए कि उनका आपस में साथ रहना मुश्किल बल्कि नामुमकिन हो और उनके साथ रहने से तरह-तरह की ख़राबियाँ और बुराइयाँ पैदा होने का ख़तरा हो तो इन हालात में दोनों में जुदाई यानी तलाक़ ही एक हल बाक़ी रह जाता है। इसी लिए इस्लाम ने भी तलाक़ के सिलसिले में रहनुमाई की है और उसका तरीक़ा बताया है। जिसपर अमल करके नुक़सान से बचा जा सकता है और ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा हासिल किया जा सकता है।

इस्लामी तालीमात से दूरी, जानकारी कमी और कुछ दूसरी वजहों से कुछ मुसलमान तलाक़ के सिलसिले में ग़लत तरीक़े अपना लेते हैं जिसकी वजह से एक तरफ़ वे ख़ुदा की नाराज़गी मोल लेते हैं और दूसरी तरफ़ अपना और अपने ख़ानदान का भारी नुक़सान करते हैं। और अपने अमल से इस्लाम और इस्लामी तालीमात को बदनाम करने का ज़रीआ भी बन जाते हैं।

यह किताब जो आपके हाथों में है तलाक़ के बारे में आसान अन्दाज़ में लिखी गई किताब है। हमें उम्मीद है कि अगर इस किताब में बयान की हुई इस्लामी तालीमात पर अमल किया जाएगा तो इन्शा अल्लाह तलाक़ की नौबत ही नहीं आएगी और अगर बहुत ही मजबूरी में इसकी नौबत आ भी गई तो नुक़सान और परेशानियों से बचा जा सकेगा। ज़रूरत इस बात की है कि इस किताब को ज़्यादा से ज़्यादा मुसलमानों तक पहुँचाया जाए और ख़ानदानों और समाज को तबाही और बरबादी से बचाने की कोशिश की जाए।

नसीम ग़ाज़ी फ़लाही

अध्यक्ष

इस्लामी साहित्य ट्रस्ट

(दिल्ली)

तलाक़ क्यों और कैसे?

तलाक़ का मामला

इनसान को ज़िन्दा रहने के लिए खाने की ज़रूरत होती है, दवा की नहीं। अगर खाने को छोड़कर दवा को खाने-पीने की आदत बना लिया जाए तो अच्छा जिस्म भी बीमार हो जाए और जान ख़तरे में पड़ जाए। लेकिन अगर वही इनसान बीमार हो जाए तो अब सेहत को लौटाने के लिए दवा ज़रूरी है। शौहर-बीवी की ज़िन्दगी में तलाक़ की हैसियत इसी दवा की है। तलाक़ अगर बे समझे-बूझे और बे-ज़रूरत दी जाए तो यह ज़िन्दगी को बरबाद कर देती है और ख़ुशियों की जगह कई तरह की मुसीबतें इनसान को घेर लेती हैं। लेकिन जब शौहर-बीवी के बीच निबाह होना इतना नामुमकिन हो जाए जैसे समुन्दर के दो किनारों का मिलना, तो उस वक़्त तलाक़ दोनों की ज़रूरत और हर एक के लिए सुख-चैन का सबब बन जाती है।

आज हमारे समाज में तलाक़ एक गम्भीर समस्या बनती जा रही है। इसके पीछे जानकारी का न होना एक बड़ी वजह है। तलाक़ से पैदा हो रही समस्याओं से घबराकर कोई तलाक़ पर बन्दिश की बात करता है और कोई उसको कुछ शर्तों के साथ पाबन्द बनाने की बात करता है। कोई कहता है कि तलाक़ का हक़ औरत को दिया जाए तो कोई चाहता है कि इसका इख़्तियार अदालत को हो। कुछ लोग तीन तलाक़ को एक मान लेना मसले का हल समझते हैं, तो कुछ लोगों के निकट तीन तलाक़ के बाद भी दोबारा शादी की तदबीरें हैं। मतलब यह कि तलाक़ के मामले में आज हर क़िस्म की बात और भाँति-भाँति की बोलियाँ सुनी जा सकती हैं। क्या तलाक़ हक़ीक़त में कोई शतरंज का खेल है जिसमें हर समझ रखनेवाला अपनी-अपनी चालें चले? और क्या तलाक़ के बारे में अल्लाह के भेजे हुए इस पाकीज़ा दीन में वाज़ेह हिदायतें और तालीमात मौजूद नहीं हैं, जो दीन दुनिया के पालनहार की भेजी हुई आख़िरी और मुकम्मल दीन है, जो हिक्मतों से भरपूर है और जो इनसानों के लिए सरापा ख़ैर व भलाई है?

इस्लामी शरीअत में तलाक़ के बारे में तफ़सीली हिदायतें मौजूद हैं। क़ुरआन व सुन्नत की तालीमात से हम आसानी से जान सकते हैं कि तलाक़ कब दी जाए? और जब दी जाए तो कैसे दी जाए?

तलाक़ से पहले

सबसे पहली बात यह है कि इस्लामी शरीअत में तलाक़ की इजाज़त क्यों है? यह बात तमाम लोग जानते हैं कि तलाक़ निकाह व शादी को ख़त्म करने का नाम है। शादी आम हालतों में हर इनसान की ज़रूरत है। शादी के ज़रीए ही इनसान का नया ख़ानदान वुजूद में आता है और इस तरह ही इनसानी नस्ल का सिलसिला जारी है। शादी इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की सुन्नत भी है और एक इबादत भी। इसके ज़रीए जाइज़ तरीक़े पर जिंसी ख़ाहिश (कामवासना) पूरी होती है और हराम और नाजाइज़ जिंसी ताल्लुक़ात से हिफ़ाज़त होती है। ऐसी ख़ूबियों और हिक्मतोंवाली शादी का बन्धन बहुत ही मज़बूत होना चाहिए क्योंकि यह रिश्ता जितना मज़बूत होगा, शादी से निकलनेवाले नतीजे भी उतने ही बेहतर और फ़ायदेमन्द होंगे। इस्लाम शादी के रिश्ते को पुख़्ता अहदो-पैमान (पक्का वादा, समझौता) और बहुत ही मज़बूत बन्धन क़रार देता है। क़ुरआन में अल्लाह ने फ़रमाया—

"और वे बीवियाँ तुमसे एक मज़बूत इक़रार ले चुकी हैं।"

(क़ुरआन 4:21)

क़ुरआन के मुताबिक़ निकाह मज़बूत समझौता (मीसाक़े-ग़लीज़) और बहुत ही पक्का वादा है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने एक सहाबी को हुक्म दिया कि उस औरत को जाकर देख लें जिससे निकाह का पैग़ाम आया हुआ है, और इसकी वजह यह बताई कि—

"इस तरह तुम दोनों के बीच रिश्ता ज़्यादा पाएदार होगा।"

(हदीसः तिरमिज़ी- 1087)

वैवाहिक रिश्ते की पाएदारी और उसमें मज़बूती की कोशिश निकाह से पहले भी होनी चाहिए और निकाह के बाद भी।

शादी के बाद इस बन्धन को मज़बूत बनाने के लिए अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने दो क़िस्म की बातें अपनाने का हुक्म दिया। पहली यह कि शौहर और बीवी दोनों के हक़ (अधिकार) और दोनों की ज़िम्मेदारियाँ तय कीं, और दोनों से फ़रमाया कि अपने-अपने फ़र्ज़ और ज़िम्मेदारियों को अदा करें। शौहर अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करेगा तो बीवी को हुक़ूक़ हासिल हो जाएँगे और बीवी अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करेगी तो शौहर को उसके हुक़ूक़ मिल जाएँगे। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने मर्द से कहा कि तुम जो खाते हो वही अपनी बीवी को खिलाओ, जो पहनते हो वही बीवी को पहनाओ, बीवी को बुरा-भला मत कहो आदि। और बीवी से आप (सल्ल॰) ने कहा—

> "तुम शौहर की बात मानो, उसके घर और बिस्तर पर ऐसे लोगों को मत आने दो जो शौहर को नापसन्द हों।"
>
> (हदीसःतिरमिज़ी-1163, अबू-दाऊद-1830)

दूसरे यह कि ज़िन्दगी के सफ़र में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। नर्म-गर्म हालात में दोनों एक-दूसरे के मिज़ाज को समझें और आपस में इनसाफ़ और सच्चाई का मामला करें। मर्द से अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "कोई मोमिन मर्द किसी मोमिन बीवी से नफ़रत न करे, अगर उसे बीवी की कोई बात नागवार गुज़री तो उसकी दूसरी बात अच्छी भी लगेगी।" (हदीसः मुस्लिम- 2672)

यह कैसी हिक्मत से भरी और नफ़सियाती (मनोवैज्ञानिक) रहनुमाई है! ऐसी सच्ची बात जिसका तजुर्बा हर इनसान को होता है। भला कौन है जिसके अन्दर अगर एक कमी है तो दूसरी बहुत सारी अच्छाइयाँ नहीं हैं। किसी नागवारी और ग़ुस्से के वक़्त जब भी यह पहलू सामने होगा, अपने आप पर कन्ट्रोल करना और ग़ुस्से पर रोक लगा लेना आसान हो जाएगा। शौहर के बारे में क़ुरआन में है—

> "अगर वे (तुम्हारी बीवियाँ) तुम्हें नापसन्द हों तो हो सकता है कि तुम एक चीज़ को नापसन्द करो और अल्लाह उसके अन्दर कोई बड़ी भलाई रख दे।" (क़ुरआन, 4:19)

और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने बीवी से कहा—

> "अगर मैं किसी को किसी इनसान के लिए सजदा करने का हुक्म देता तो बीवी को हुक्म देता कि वह अपने शौहर को सजदा करे।" (हदीस : तिर्मिज़ी- 1159)

इन दोनों बातों को अपनाकर मियाँ-बीवी एक-दूसरे के साथ और ज़्यादा हमदर्द बन जाते हैं, फ़रीक़ नहीं बनते हैं। दोनों एक-दूसरे का हिस्सा और पार्टनर बन जाते हैं, पार्टी नहीं बनते हैं। और एक-दूसरे के सिलसिले में यह सोच आधे से ज़्यादा मसलों की जड़ काट देती है। इस एहसास के रहते हुए अगर किसी की कोई कमी कभी सामने आती है, किसी तरफ़ से कभी कोताही हो जाती है, या कोई काम पूरा नहीं होता है, तो उसपर गुस्सा आने के बजाय उसके साथ हमदर्दी पैदा होती है, उसको ताना देने के बजाय उसको समझाने और बताने का जज़्बा पैदा होता है, उससे बदला लेने की सोच के बजाय उसकी इस्लाह (सुधार) का ख़्याल आता है। और जब एक तरफ़ से ऐसे जज़्बात और सुलूक का इज़हार होता है तो दूसरी तरफ़ भी अपनी कोताही पर शर्मिन्दगी और दूसरे के लिए मुहब्बत व एहतिराम का जज़्बा बढ़ता है। एक-दूसरे से नफ़रत और दूरी उनमें नहीं बैठती। और बैठे भी कैसे! जब दोनों ही एक-दूसरे का हिस्सा हैं और दोनों मिलकर ही मुकम्मल होते हैं तो अपने ही हिस्से के साथ कोई कैसे अजनबी का-सा मामला कर सकता है। देखिए क़ुरआन कैसे हिक्मत भरे अन्दाज़ में इस ताल्लुक़ को बताता है—

> "तुम आपस में एक-दूसरे का जुज़्व (हिस्सा) हो।"
> (क़ुरआन 3:195)

क़ुरआन इस बात को और अच्छे अन्दाज़ में इस तरह बयान करता है—

> "बीवियाँ तुम्हारे लिए लिबास हैं और तुम बीवियों के लिए लिबास हो।" (क़ुरआन 2:187)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने इसी दो तरफ़ा ताल्लुक़ को बताते हुए फ़रमाया—

"औरतें मर्दों का हिस्सा हैं।" (हदीस : अबू-दाऊद-236)

मियाँ-बीवी के बीच ताल्लुक़ का यह पहलू जब निगाहों में नहीं होता है तब छोटी-छोटी बात बिला वजह मसला बनने लगती है। किसी कोताही या कमी पर बिला वजह शक की नज़र पड़ने लगती है, बात-बात पर पकड़ होने लगती है, फिर एक तरफ़ से शक और ताना, दूसरे के अन्दर भी ग़ुस्सा और बदला लेने का शैतानी जज़्बा भड़काता है, फिर राई का दाना पहाड़ बनता है और चिंगारी शोलों में बदल जाती है जिससे पूरा घर जलने लगता है। आग फिर आग है, फैलती है तो जलाती चली जाती है। मियाँ-बीवी ही नहीं, दोनों के ख़ानदान झुलसते हैं और सबसे बड़ा नुक़सान बच्चों का होता है। जब एक दूसरे को अपना हमदर्द साथी और पार्टनर नहीं समझेंगे तब फ़रीक़ और पार्टी बन जाएंगे, फिर हमेशा कशमकश रहेगी और अपना फ़र्ज़ निभाने की जगह अपने हक़ों की माँग शुरू हो जाएगी। यही उल्टी तरतीब और उल्टी सोच है जो ज़िन्दगी की गाड़ी को पीछे ले जाती है। सिर्फ़ इस सोच को सीधा कर लिया जाए और तरतीब पलट दी जाए तो उसी जगह रहते हुए दोनों एक-दूसरे के लिए हमदर्द और ख़ैरख़्वाह बन जाते हैं और अपने मसले बड़े अच्छे ढंग से सुलझा लेते हैं। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"देखो! औरतों के साथ अच्छे बरताव की नसीहत क़बूल करो, वह तुम्हारे लिए तो सिर्फ़ मददगार हैं।"

(हदीस : तिरमिज़ी- 1163)

तलाक़ मत दीजिए

जब निकाह का रिश्ता मज़बूत होता है तो उसको तोड़ने की ज़रूरत नहीं रह जाती है। शादी के सिलसिले में इस्लाम की यही तालीम है। अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) भी यही चाहते हैं। इसलिए अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने तलाक़ देने से जहाँ तक मुमकिन हो बचने का हुक्म दिया है और तरह-तरह से यह बात समझाई है कि तलाक़ देना बहुत ही बुरा और तकलीफ़ देनेवाला काम है। इस बात को इस्लाम बिलकुल पसन्द नहीं करता कि इनसान सिर्फ़ बीवी बदलने के लिए मौजूदा बीवी को तलाक़ दे। अगर किसी की जिन्सी

ख़ाहिश और दूसरी ज़रूरतें एक बीवी से पूरी नहीं होतीं तो इस्लाम उसे और बीवियाँ रखने की इजाज़त देता है। मगर इसके लिए शर्त यह है कि वह इसकी क़ुदरत भी रखता हो और सब बीवियों के साथ इनसाफ़ भी कर सके।

और इसी तरह अगर किसी जायज़ वजह के बग़ैर औरत अपने शौहर से तलाक़ की माँग करती है तो अल्लाह की तरफ़ से वह बहुत सख़्त सज़ा की हक़दार है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया है—

> "जो औरत अपने शौहर से बग़ैर किसी मुनासिब वजह के तलाक़ माँगती है तो उसपर जन्नत की ख़ुशबू हराम हो जाती है।"
>
> (हदीस : अबू-दाऊद- 1899)

तलाक़ मामूली बातों और छोटे-मोटे ग़ुस्से पर देने की चीज़ नहीं है। जिस तरह निकाह के वक़्त दो बोल कहकर दो अजनबी मर्द-औरत इतने क़रीब हो जाते हैं कि उनकी क़ुरबत ख़ानदान के किसी भी दूसरे रिश्ते में नहीं होती है और वही दो बोल रिश्ते का मज़बूत बन्धन क़ायम कर देते हैं इसी तरह दो बोल से मज़बूत रिश्ता टूट भी जाता है। रिश्ते मज़बूत बन्धन क़ायम रखने के लिए तलाक़ के उन दो बोल से बचने का सख़्ती से हुक्म दिया गया है। ये बोल और अलफ़ाज़ बहुत अहम हैं। हल्की-फुल्की कहा-सुनी और मामूली अनबन पर इन अलफ़ाज़ का इस्तेमाल ऐसा ही है जैसे ज़हर उठाकर खा लिया जाए। ख़बरदार! ज़रा-सी बात पर ऐसी भयानक ग़लती हरगिज़ न की जाए। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

> "तीन चीज़ों में संजीदगी और मज़ाक़ बराबर हैं— निकाह, तलाक़ और रुजू"। (हदीस : तिरमिज़ी- 1183)

यानी तीनों चीज़ें जिस तरह सोच-समझकर बोलने से लागू हो जाती हैं, उसी तरह अगर मज़ाक़ में भी ये अलफ़ाज़ इस्तेमाल किए जाएँ तब भी ये बातें लागू हो जाती हैं। अस्ल में इन तीनों चीज़ों की अहमियत की वजह से इनको मज़ाक़ की बात बनाने से इस्लाम ने रोका है। ऐसी नज़ाकत और सख़्त असर रखनेवाले अलफ़ाज़ को यूँ ही ज़बान पर ले आना और मामूली बातों पर उनका

इस्तेमाल करना अल्लाह को सख़्त नापसंन्द है और यह बहुत बड़ी ग़लती है। ऐसी ग़लती करने से बचना चाहिए और सख़्त मजबूरी के बग़ैर अमल में नहीं लाना चाहिए। अगर कोई पूछे कि दुनिया में सबसे बुरी चीज़ क्या है तो उसका जवाब होगा– तलाक़। यह जवाब दुनिया के सबसे सच्चे इनसान और अल्लाह के आख़िरी पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का है। वे फ़रमाते हैं–

> "अल्लाह के नज़दीक हलाल चीज़ों में सबसे बुरी और नापसन्दीदा चीज़ तलाक़ है।" (हदीस : अबू-दाऊद- 1863)

कोई भी हलाल और जाइज़ काम 'तलाक़' से ज़्यादा बुरा नहीं है। यह इतनी बुरी चीज़ इसलिए है कि इसका असर किसी शख़्स तक नहीं रहता और न ही तलाक़ से सिर्फ़ दो लोग मुतास्सिर होते हैं, बल्कि इससे ख़ानदान की इकाई टूट जाती है, फिर दोनों ख़ानदानों तक नफ़रत व दुश्मनी पहुँचती है। नई तैयार होनेवाली नस्ल की बुनियाद हिल जाती है और फिर धीरे-धीरे पूरे समाज में टूट-फूट होने लगती है। तलाक़ से जो असरात पड़ते हैं वे दूर तक जाते हैं, इसी लिए इसे सबसे बुरी चीज़ कहा गया है।

अगर मियाँ-बीवी में इख़्तिलाफ़ हो जाए तो?

यह मुमकिन है कि मियाँ और बीवी दोनों ही अपनी ज़िम्मेदारियों को होशमन्दी और फ़िक्र के साथ पूरी कर रहे हों, फिर भी आपस में इख़्तिलाफ़ उभर आए। तो ऐसे मौक़े पर क्या करना चाहिए? क्या ग़ुस्से में आकर तलाक़ दे दी जाए? नहीं, हरगिज़ नहीं। तलाक़ जैसी अहम बात ग़ुस्से में नहीं होनी चाहिए। अगर इख़्तिलाफ़ पैदा हो जाए तो उस मौक़े पर कुछ बातों का ख़्याल रखना ज़रूरी है। वे बातें ये हैं–

(1) आपस में इख़्तिलाफ़ क्यों हुआ? क्या आपसे कोई जाइज़ शिकायत है? अगर हाँ तो उसे दूर करना चाहिए। आप कोई हक़ अदा नहीं कर रहे हैं तो उसे पूरा कीजिए। अपनी कोताही को दूर कीजिए, इख़्तिलाफ़ खुद-ब-खुद ख़त्म हो जाएगा।

(2) मियाँ-बीवी दोनों बैठकर ठंडे दिल से अपने हालात का जायज़ा लें।

एक-दूसरे को समझाएँ। समझने-समझाने से इख़तिलाफ़ दूर हो जाता है।

(3) ख़ानदान के किसी ऐसे शख़्स को बीच में डालिए जो आपका हमदर्द और आपकी भलाई चाहता हो। उस शख़्स को चाहिए कि वह संजीदगी से मियाँ-बीवी दोनों की बात सुने और दोनों को समझा-बुझाकर शिकायत ख़त्म कराने की काशिश करे। जिसकी कोताही हो उसको कोताही दूर करने का पाबन्द बनाए। यह बात सामने रहनी चाहिए कि यह हार-जीत का मामला नहीं है बल्कि अपनी ज़िन्दगी को खुशगवार बनाने का मामला है। इसलिए अपनी कोताही को फौरन मान लेना चाहिए और उसे दूर करना चाहिए।

(4) अगर इख़तिलाफ़ और आपसी झगड़ा आगे बढ़ चुका है तो मियाँ-बीवी दोनों के ख़ानदान से एक-एक हकम (पंच) तय कर लीजिए। ख़ानदान के लोग इसलिए लीजिए कि वे घर की बातों से वाक़िफ़ भी होंगे और अच्छी तरह तहक़ीक़ भी कर सकेंगे। ये दोनों पंच मुख़लिस, हमदर्द, ख़ैरख़ाह हों और उन दोनों का अस्ल मक़सद इख़तिलाफ़ और झगड़े को ख़त्म करा के मियाँ-बीवी को मिला देना हो। दोनों पंच पूरी ईमानदारी और इनसाफ़ के साथ इख़तिलाफ़ का जाइज़ा लें और दोनों के लिए ज़ाब्ता तय करें। जिन बातों की वजह से झगड़ा पैदा हुआ है उन बातों को या तो बन्द कराएँ या फिर उनकी हदें मुक़र्रर कर दें।

(5) कुछ मौक़ों पर इख़तिलाफ़ की वजह खुद मियाँ-बीवी नहीं होते, बल्कि कोई तीसरा आदमी होता है। मियाँ-बीवी में मुहब्बत और एक-दूसरे के लिए भलाई की चाहत होती है, लेकिन कभी ख़ानदान का कोई आदमी इधर की बात उधर लगाकर, या फिर झूठी बातें बनाकर, या मियाँ-बीवी में से किसी को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ चलने पर मजबूर करने के मक़सद से दोनों को लड़ाने लगता है। कभी मुहल्ले-पड़ोस की कोई औरत या कोई मर्द शौहर को बीवी के

ख़िलाफ़, या बीवी क़ो शौहर के ख़िलाफ़ भड़काता है। इस सूरत में शौहर और बीवी दोनों को चाहिए कि अपनी भलाई के लिए उस बुराई चाहनेवाले की बातों पर कोई ध्यान न दें, बल्कि उसे साफ़ मना कर दें कि हम अपने मामलात खुद सुलझा लेंगे। अगर ऐसी हरकत अपने घर का ही कोई व्यक्ति या रिश्तेदार कर रहा है तो शौहर-बीवी अपना ऐसा माहौल बनाएँ कि उनके मामले में किसी दूसरे को दख़ल देने का मौक़ा न रहे। ज़रूरत हो तो अपने रहने-सहने की जगह बदल दें। क्योंकि माहौल बदल जाने से भी पुराने माहौल से पैदा होनेवाला इख़्तिलाफ़ ख़त्म हो जाता है।

इख़्तिलाफ़ दूर करना एक मोमिन की शान है और यही अल्लाह का हुक्म है। अक़्ल और समझ-बूझ का भी यही तक़ाज़ा है। दूसरे बुरा चाहनेवाले तो आपस में लड़ाकर तमाशा देखते हैं। क़ुरआन ने इसी लिए मर्द को नसीहत करते हुए हुक्म दिया और कहा—

> "और बीवियों के साथ भले तरीक़े से गुज़र-बसर किया करो।" (क़ुरआन, 4:19)

क़ुरआन में अल्लाह ने वादा फ़रमाया है कि अगर तुम इख़्तिलाफ़ दूर करने की कोशिश करोगे तो अल्लाह तुम्हारे दरमियान मेल-मुहब्बत पैदा कर देगा। कहा गया है—

> "अगर तुम्हें दोनों के बीच कशमकश का इल्म हो तो तुम एक हकम (पंच) मर्द के ख़ानदान से और एक हकम औरत के ख़ानदान से मुक़र्रर कर दो, अगर दोनों की नीयत आपस में इस्लाह कराने की होगी तो अल्लाह दोनों के बीच मेल-मिलाप पैदा कर देगा।" (क़ुरआन, 4:35)

यह कितना अच्छा नुस्ख़ा है। कितने टूटे दिलों को अल्लाह जोड़ देता है। जब झगड़ा पैदा हो जाए तो इस क़ुरआनी नुस्ख़े को इस्तेमाल करना चाहिए। अल्लाह ने चाहा तो इससे न सिर्फ़ खुशियाँ लौट आएँगी, बल्कि मुहब्बत पहले से ज़्यादा बढ़ जाएगी और ताल्लुक़ पहले से ज़्यादा मज़बूत हो जाएगा।

अलग होने के लिए सिर्फ़ एक तलाक़

यह बात सब जानते हैं कि ज़िन्दगी में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। एक-दूसरे से कभी शिकायत होती है, कभी तकलीफ़ भी पहुँचती है। ये बातें ज़िन्दगी का लाज़मी हिस्सा हैं, शायद किसी की भी ज़िन्दगी ऐसी किसी बात से ख़ाली हो। ऐसी बातें आनी-जानी होती हैं। आज शिकायत है, कल ख़त्म हो जाएगी। वक़्ती तकलीफ़ जाती रहेगी। माली हालत ख़राब है तो मिल-जुल कर कोशिश करने से अल्लाह खुशहाली पैदा करेगा। ऐसी बातों पर अलग नहीं होना चाहिए और न ही ऐसा सोचना चाहिए। लिहाज़ा कभी ऐसा न कीजिए कि ऐसी किसी बात या ग़ुस्से पर तलाक़ का लफ़्ज़ ज़बान पर आए। ख़ूब समझ लीजिए कि तलाक़ क्या चीज़ है?

जिस तरह शादी दो अजनबियों को जोड़ती है उसी तरह तलाक़ शादी को ख़त्म कर देती है। तलाक़ उसी वक़्त के लिए है जब शादी ख़त्म करने की वाक़ई ज़रूरत पेश आ जाए। शादी के लिए दो परिवारों में महीनों बातचीत और देख-भाल होती है। ख़ानदान के बड़े-बुज़ुर्ग और दोस्तों से मशविरे होते हैं। हर तरह से इतमीनान हासिल किया जाता है, फिर एहतिमाम के साथ और बड़ों की मौजूदगी में शादी की कार्रवाई अंजाम पाती है। ठीक इसी तरह जब शादी ख़त्म करने की बात आए तो इसपर हर पहलू से बातचीत होनी चाहिए, ख़ानदान के बुज़ुर्गों और ख़ैरख़्वाहों से मशविरे किए जाने चाहिएँ, मज़हबी उलमा (विद्वानों) से इसके बारे में शरई (क़ानूनी) रहनुमाई ली जानी चाहिए। फिर इन सबके बाद जब पूरी तरह इतमीनान हो जाए कि शादी ख़त्म करना ही ज़रूरी है और अब यही अल्लाह का हुक्म है, उस वक़्त बड़ों की मौजूदगी में शादी ख़त्म करने की कार्रवाई होनी चाहिए। इसका नाम तलाक़ है और तलाक़ देने का यही सही तरीक़ा है। क़ुरआन ने इस बात को इस तरह कहा है—

> "या तो रख लेना है क़ायदे के मुताबिक़ या फिर भले तरीक़े से छोड़ देना है।" (क़ुरआन, 2 : 229)

यानी शादी का मक़सद यह है कि भले तरीक़े पर ज़िन्दगी गुज़ारी जाए। अगर यह नामुमकिन हो जाए और इख़्तिलाफ़ दूर करने और मशविरा करने के तमाम मरहले पूरे करने के बाद यह तय हो जाए कि अब अलग हो जाने ही में मियाँ-बीवी दोनों की भलाई है तब ही अलग होने की कार्रवाई की जाए। क़ुरआन ऐसे ही मौक़े पर और ऐसे ही हालात में अलग होने को सही क़रार देता है। वह कहता है कि जब मियाँ-बीवी दोनों को अन्दाज़ा हो जाए कि दोनों एक साथ खुशगवार ज़िन्दगी नहीं गुज़ार सकते और एक-दूसरे के जो हक़ हैं और शौहर-बीवी के लिए अल्लाह के जो हुक्म हैं उन्हें पूरा नहीं कर सकते, तो अब दोनों को अलग हो जाना चाहिए।

> "अगर तुम को यह अन्देशा हो कि वे अल्लाह के ज़ाब्तों को क़ायम न रख सकेंगे, तो उन दोनों के बीच यह मामला हो जाने में कोई हरज नहीं कि बीवी शौहर को कुछ मुआवज़ा देकर जुदाई हासिल कर ले, ये सब अल्लाह के ज़ाब्ते हैं, सो उनसे बाहर न निकलना।" (क़ुरआन, 2:229)

तलाक़ देने का तरीक़ा

अगर इस मरहले पर आकर तलाक़ की कार्रवाई अन्जाम दी जाएगी तो उसका तरीक़ा इस तरह होगा—

(1) अगर शौहर ने बीवी का महर अदा नहीं किया है तो उसे महर की रक़म अदा करनी होगी।

(2) देखना होगा कि बीवी उन दिनों किस हालत में है। अगर वह माहवारी के दिनों में है तो इस हालत में तलाक़ नहीं देनी चाहिए और इसके लिए उसके पाकी के दिनों का इन्तिज़ार करना चाहिए। जब बीवी पाक हो जाए तो शौहर को उससे जिस्मानी ताल्लुक़ नहीं बनाना चाहिए।

(3) अब शौहर कम-से-कम दो बड़ों की मौजूदगी में सिर्फ़ एक मरतबा तलाक़ दे, ज़बान से एक बार बोलना या इतना लिख देना काफ़ी होगा

कि "मैं तलाक़ देता हूँ" इस तरीक़े से तलाक़ हो गई। इस जुमले को फिर दोहराने की ज़रूरत नहीं, न लफ़्ज़ तलाक़ का जुमला दोहराया जाए या तीन बार बोला या लिखा जाए। ऐसी ग़लती कभी नहीं करनी चाहिए क्योंकि यह एक बहुत बड़ी ग़लती है, इतनी बड़ी कि जब अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को मालूम हुआ कि एक साहब ने ऐसी ग़ लती की है और तलाक़ तीन बार दी है तो बेइन्तिहा रहम दिल रसूल (सल्ल०) का चेहरा ग़ुस्से से लाल हो गया। आप (सल्ल०) बहुत नाराज़ हुए और इस तरह सख़्त बात कही—

> "मेरे रहते हुए अल्लाह की किताब (क़ुरआन) के साथ तुम लोग खिलवाड़ बनाए हुए हो।"
>
> (हदीसः नसई, किताबुत्तलाक़- 3430)

(4) ग़ुस्से का आलम और जुमले की संगीनी देखिए और अन्दाज़ा लगाइए कि एक बार में तलाक़ देना कितना बड़ा गुनाह और कैसी भयानक ग़लती है। कुछ नासमझ क़िस्म के लोग ऐसे मौक़े पर तलाक़ तीन बार लिखवाते हैं या कहलवाते हैं। उन्हें शरीअत का मसला सही तौर पर मालूम नहीं है। किसी क़ानूनी काग़ज़ पर तलाक़ लिखने की ज़रूरत आए तो वहाँ भी सिर्फ़ एक बार लिखना चाहिए, याद रखिए कि अलग होने के लिए सिर्फ़ एक तलाक़ काफ़ी है।

(5) एक तलाक़ देने के बाद तलाक़ हो जाती है और उसी वक़्त से इद्दत भी शुरू हो जाती है। तीन हैज़ (माहवारी) या तीन महीने की इद्दत गुज़र जाने के बाद मर्द-औरत दोनों के सम्बन्ध पूरी तरह ख़त्म हो जाते हैं। इद्दत के दिनों में बीवी का नान व नफ़क़ा मर्द के ज़िम्मे रहता है। इस मुद्दत में औरत शौहर ही के घर में रहकर इद्दत पूरी करेगी। अगर इद्दत के तीन महीनों के दौरान अलग ज़िन्दगी गुज़ारते हुए अपने पिछले फ़ैसले पर मर्द को अफ़सोस हो या बीवी इस मुद्दत में अपनी कमज़ोरी की इस्लाह कर ले और फिर मर्द उसे वापस बीवी की

हैसियत से रखना चाहे तो उसके लिए सिर्फ़ रुजू कर लेना काफ़ी होगा। रुजू यह है कि शौहर बीवी से कहे कि मैं तुम्हें वापस बीवी बनाना चाहता हूँ या उसके साथ बीवी जैसा कोई अमल कर ले। बेहतर यह होगा कि रुजू करने की बात भी बड़ों की मौजूदगी में की जाए। रुजू के बाद नया रिश्ता फिर शुरू हो जाएगा। अगर इद्दत के तीन महीने गुज़र गए और शौहर ने रुजू नहीं किया तो बीवी अब जुदा हो जाएगी। इसके बाद कभी ऐसा इरादा हुआ कि फिर रिश्ता बना लें तो दोबारा रिश्ता बनाने का तरीक़ा यह होगा कि दोबारा नए महर के साथ निकाह की कार्रवाई अंजाम दी जाए। इस निकाह के बाद दोनों फिर से मियाँ-बीवी हो जाएँगे। एक तलाक़ देने से आइन्दा इस तरह के इमकानात का रास्ता खुला रहता है। अगर फिर से उनको मियाँ-बीवी की हैसियत से रहना न भी हो तब भी सिर्फ़ एक तलाक़ से दोनों में जुदाई हो जाती है।

तीन तलाक़ का मसला

तीन तलाक़ के मसले पर इन दिनों काफ़ी चर्चा है और तरह-तरह की बातें लोग कहते फिरते हैं। पहले इतनी बात अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि तीन तलाक़ देना गुनाह है। और पिछली बातों को अगर आपने ध्यान से पढ़ा है तो आप पूरी तरह समझ गए होंगे कि तीन तलाक़ की ज़रूरत भी नहीं है। तलाक़ सोच-समझकर और मशविरे के बाद देने की चीज़ है। और सिर्फ़ एक तलाक़ से अलाहदगी (Separation) मुकम्मल हो जाती है।

अगर कोई इनसान अलग होने के लिए एक तलाक़ देने का ऊपर लिखा तरीक़ा नहीं अपनाता है और एक ही बार तीन तलाक़ दे देता है तो इस बारे में कुछ बातों को समझ लेना चाहिए

(1) इकट्ठे यानी एक ही बार में तीन तलाक़ देना बड़ा गुनाह और नाफ़रमानी है। ऐसा करनेवाला गुनाहगार और अल्लाह व रसूल (सल्ल०) की नाराज़गी का हक़दार है।

(2) तीन तलाक़ इकट्ठी देने से तलाक़ हो जाती है। पूरी दुनिया के सुन्नी मुसलमानों के नज़दीक चार फ़िक़ही मसलक राइज हैं और ये चारों मसलक भरोसेमन्द और सही हैं। ये मसलक इस्लामी क़ानून की रौशनी में रहनुमाई करते हैं। ये मसलक हैं– हनफ़ी, शाफ़ई, मालिकी और हम्बली। इन चारों मसलकों में इकट्ठी दी गई तीन तलाक़ें तीन मानी जाती हैं जिसे तलाक़े-मुग़ल्लज़ा (बहुत सख़्त तलाक़) कहते हैं। इसका मतलब है कि अब मियाँ-बीवी दोनों में यकजाई का रास्ता पूरी तरह बन्द हो गया।

(3) हिन्दुस्तान और दुनिया के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में कुछ मुसलमान अहले-हदीस मसलक को मानते हैं। इसी तरह शीआ फ़िरक़े में बड़ी तादाद जाफ़रिया फ़िक़ह पर अमल करनेवालों की है। इन दोनों मसलकों के माननेवालों में अगर इकट्ठी तीन तलाकें दी गईं तो वे लागू हो जाएँगी, लेकिन वे तीन तलाक़ें नहीं मानी जाएंगी, बल्कि सिर्फ़ एक तलाक़ मानी जाएगी।

(4) दोनों तरह की फ़िक़ही रायों की बुनियाद शरई दलीलों पर है। जो मुसलमान जिस मसलक से जुड़े हैं उन्हें अपने आलिमों से पूछकर उसपर अमल करना चाहिए।

(5) इकट्ठी तीन तलाक़ अगर किसी मुसलमान ने इस तरह दी हैं कि सिर्फ़ लफ़्ज़ तलाक़ या तलाक़ के जुमले को दोहराया है, जैसे "तलाक़, तलाक़, तलाक़" या "तलाक़ देता हूँ, तलाक़ देता हूँ, तलाक़ देता हूँ।" गिनती और तादाद नहीं बोला है, यानी "तुमको तीन तलाक़ देता हूँ" जैसे जुमले नहीं बोले हैं और तलाक़ देनेवाला कहता है कि अलफ़ाज़ के दोहराने से मेरी मुराद सिर्फ़ तकरार और ताकीद है, तो हनफ़ी मसलक में इसको एक तलाक़ माना जाता है।

बहरहाल तलाक़ चाहे एक मानी जाए या तीन, इतनी बात तो तय है कि तीन तलाक़ की न तो ज़रूरत है और न ही ऐसा करना सही है। इससे आगे

यह सोचना चाहिए कि इस्लाम तो सिरे से तलाक़ को बन्द करने की बात कहता है। तलाक़ हो ही क्यों? आपसी इख़तिलाफ़ को दूर करना चाहिए। एक-दूसरे की कमियों को बरदाश्त करना चाहिए। गुस्सा ज़ाहिर करने के लिए लफ़्ज़ तलाक़ को खिलवाड़ नहीं बनाना चाहिए। अगर ऐसा किया जाएगा तो तलाक़ की नौबत ही न आएगी। तलाक़ सिर्फ़ उन लोगों के लिए है जिनके लिए हर तरह से यह तय हो जाए कि दोनों की आगे आनेवाली ज़िन्दगी की बेहतरी अलग हो जाने ही में है। इस मक़सद के लिए जब तलाक़ दी जाएगी तो सिर्फ़ 'एक तलाक़' से अलाहदगी हो जाएगी।

इस्लाम में 'तलाक़' के बारे में जो हिदायतें दी हैं जब उनको सामने रखा जाएगा और उनकी पाबन्दी की जाएगी तो फिर तीन तलाक़ को एक या तीन मानने की बहस बिलकुल बेकार साबित होगी है। इसलिए यह तय कर लेना चाहिए कि—

"एक तलाक़ अभी नहीं

और

तीन तलाक़ कभी नहीं।"

तीन तलाक़ देने के बाद?

जैसा कि यह बात आपके सामने आ चुकी है कि इस्लाम ने तलाक़ कब और किन हालात में देने की हिदायत की है। यह मक़सद सिर्फ़ एक तलाक़ से पूरा हो जाता है। एक तलाक़ का जो हुक्म पीछे लिखा गया है, अगर एक के बाद फिर कभी आगे दूसरी तलाक़ की नौबत आए या कोई एक़ की जगह दो तलाक़ दे बैठे तो उन दोनों सूरतों में दो तलाक़ों का भी एक तलाक़ जैसा ही हुक्म है।

तीन तलाक़ें चाहे तीन मरतबा में हुई हों या इकट्ठी तीन हुई हों, इसका मतलब यह होता है कि अब हमेशा के लिए मियाँ-बीवी जुदा हो गए। इसी लिए इसका नाम तलाक़े-मुग़ल्लज़ा (सख़्त तरीन तलाक़) है। तीन तलाक़ के बाद दोबारा मिलने का रास्ता तलाश करना बहुत बड़े दर्जे की ग़लती और हेमाक़त है।

इस मौक़े के लिए क़ुरआन ने एक बात कही है और उसको खोलकर हदीस में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने बयान भी फ़रमाया है। वह बात यह है कि अगर किसी मर्द और औरत के दरमियान तीन तलाक़ें हो चुकी हैं और उसके बाद औरत का निकाह किसी दूसरे मर्द से होता है, फिर किसी वजह से उस दूसरे मर्द से भी अलाहदगी हो जाती है या दूसरे मर्द की मौत हो जाती है, या वहाँ से किसी जाइज़ बुनियाद पर तलाक़ हो जाती है और इद्दत भी गुज़र जाती है, तो अब यह औरत किसी तीसरे मर्द से शादी कर सकती है। इस सूरत में यह तीसरा मर्द पहला शौहर भी हो सकता है। सिर्फ़ यही एक तरीक़ा है जिसमें तीन तलाक़ के बाद पहले शौहर से दोबारा शादी का रास्ता क़ुरआन ने खोल रखा है। यह इत्तिफ़ाक़ी रास्ता है, यानी अगर इत्तिफ़ाक़ से ऐसा हो जाए कि औरत का दूसरा शौहर न रहे तो वह अब पहले शौहर से भी निकाह कर सकती है।

तीन तलाक़ के बाद पहले शौहर से निकाह का यह रास्ता इमकानी और इत्तिफ़ाक़ी मौक़े के लिए इस्लाम ने खोल रखा है। यह कोई मंसूबा-बन्द तरीक़ा हरगिज़ नहीं है कि तीन तलाक़ हो जाने के बाद उसी शौहर से दोबारा शादी करने के मक़सद के तहत दूसरे मर्द से वक़्ती तौर पर निकाह का मंसूबा-बन्द तरीक़ा अपना लिया जाए।

अल्लाह की पनाह! इस्लाम जैसा पाकीज़ा दीन ऐसी बेशर्मी, बेहयाई और गन्दगी के तरीक़े को भला कैसे गवारा कर सकता है! अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने ऐसे घिनावने तरीक़े को अपनानेवाले के लिए कितनी सख़्त बात फ़रमाई है—

> "अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हलाल बनानेवाले और जिसके लिए हलाल बनाया, दोनों पर लानत की है।"
>
> (हदीस : तिरमिज़ी- 1120)

लानत से बदतरीन और सख़्त बात और क्या हो सकती है! ऐसा तरीक़ा अपनाकर अल्लाह और रसूल (सल्ल॰) की लानत का हक़दार बनने से बचना चाहिए।

तलाक़ देने का इख़्तियार किसे?

तलाक़ जब मियाँ-बीवी के आपसी इत्तिफ़ाक़ से दी जाए, और तलाक़ के ज़रीए अलाहदगी को ही दोनों बेहतर समझ रहे हों, तो उस वक़्त यह सवाल बेमानी हो जाती है कि तलाक़ देने का हक़ किसे है। इस्लाम ऐसे ही मौक़े के लिए तलाक़ देने को सही मानता है।

जहाँ तक यह सवाल है कि अलाहदगी कौन ले सकता है? तो इसका जवाब यह है कि इस्लाम ने अलाहदगी के कई रास्ते रखे हैं और वे सब अलग-अलग मौक़ों के लिए हैं। अस्ल में इसके अन्दर यह हिक्मत काम कर रही है कि मियाँ-बीवी में से किसी पर ज़ुल्म न होने पाए। मज़लूम को ज़ुल्म से नजात दिलाने के लिए अलाहदगी के मुख़्तलिफ़ तरीक़े इस्लाम ने बताए है।

तलाक़

इन तरीक़ों में सबसे पहला और भला तरीक़ा तलाक़ है। इस्लाम ने यह हक़ मर्द को दिया है। तलाक़ देने का हक़ मर्द को देने की कई वजहें हैं। पहली वजह यह है कि घर जो एक संस्था की तरह है, उसका सरदार मर्द को बनाया गया है। क़ुरआन कहता है—

"शौहर बीवियों के मुहाफ़िज़ और निगराँ हैं।"

(क़ुरआन, 4:34)

दूसरी वजह यह है कि मियाँ-बीवी की ज़िन्दगी में निकाह के बाद मर्द पर दो ज़िम्मेदारियाँ इस्लाम डालता है। एक यह कि मर्द अपनी बीवी को महर के नाम से एक मुनासिब तय रक़म दे। दूसरी यह कि ज़िन्दगी भर खाना-ख़र्चा और मकान बीवी के लिए फ़राहम करे। बीवी अपनी जगह चाहे कितनी ही मालदार हो, उसका खाना-ख़र्चा मर्द के ज़िम्मे इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ लाज़मी है। यह ज़िम्मेदारी औरत पर नहीं डाली गई है। इन्हीं वजहों से अलाहदगी की पहली सूरत यानी तलाक़ का हक़ मर्द को दिया गया है। लेकिन यह हक़ किस मौक़े के लिए है और (इसका) क्या तरीक़ा है? इसपर पीछे बात हो चुकी है। अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने फ़रमाया—

"तलाक़ उसके लिए है जिसने ज़िम्मेदारी ली है।"

(हदीसः इब्ने-माजा- 2081)

तफ़वीज़े-तलाक़

मियाँ-बीवी के जुदा होने का दूसरा तरीक़ा तलाक़ के हक़ की सुपुर्दगी (तफ़वीज़े-तलाक़) है। इस तरीक़े के ज़रीए अलग होने की सहूलत औरत को दी गई है। इसमें मर्द अपना तलाक़ देने का हक़ बीवी के हवाले कर देता है। लिहाज़ा अगर निकाह के वक़्त या निकाह के बाद भी मर्द तलाक़ का हक़ बीवी के सुपुर्द कर देता है तो यह तफ़वीज़े-तलाक़ होगी। अगर शौहर ने किसी शर्त के साथ तलाक़ का हक़ दिया है तो शर्त पूरी होने पर बीवी ख़ुद से इस हक़ का इस्तेमाल करते हुए अपने आपको तलाक़ दे सकती है। इस तरह दी गई तलाक़ लागू हो जाएगी।

ख़ुलअ

अलाहदगी का तीसरा तरीक़ा 'ख़ुलअ्' है। यह तरीक़ा भी औरत के लिए है। अगर औरत को यह अन्दाज़ा हो जाता है कि वह शादीशुदा ज़िन्दगी के हुक़ूक़ और ज़िम्मेदारियों को अदा नहीं कर सकती है तो वह शौहर से अलग होने का मामला कर सकती है। औरत मेहर की रक़म अदा करेगी और उस रक़म के बदले मर्द उसे तलाक़ दे देगा। इस तरीक़े का नाम 'ख़ुलअ' है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के वक़्त की बात है। हबीबा बिन्ते-सुहैल (रज़ि॰) जो एक सहाबिया थीं, वे हज़रत साबित-बिन-क़ैस (रज़ि॰) की बीवी थीं। लेकिन उनका अपने शौहर के घर किसी तरह जी नहीं लगा। उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पास आकर अर्ज़ किया कि मुझे हज़रत साबित (रज़ि॰) से कोई शिकायत नहीं है। मुझे न उनके दीन पर और न उनके बर्ताव और सुलूक पर कोई तकलीफ़ है। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि अल्लाह ने जो शौहर के हक़ बीवी पर रखे हैं मैं उन्हें पूरे नहीं कर पाऊँगी। तो अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हज़रत हबीबा (रज़ि॰) से कहा कि मेहर में हज़रत साबित (रज़ि॰) ने जो बाग़ तुम्हें दिया है उसे लौटा दो, और हज़रत साबित (रज़ि॰) से फ़रमाया कि इसके बदले तुम तलाक़ दे दो। यही 'ख़ुलअ' है।

फ़स्ख़

औरत को इस्लामी अदालत और मुस्लिम क़ाज़ी के ज़रीए अलग होने का एक और रास्ता भी मिलता है। अगर औरत को मर्द के बारे में शिकायत है। मिसाल के तौर पर वह नामर्द है, या खाना-ख़र्चा नहीं देता, या अच्छा बर्ताव नहीं करता, या शौहर लापता हो गया है, या पागल हो गया है, या वह किसी जानलेवा बीमारी में गिरफ़्तार हो गया है वग़ैरह, तो औरत अपना मुक़द्दमा क़ाज़ी के यहाँ पेश करेगी। क़ाज़ी मामले की जाँच पड़ताल और अदालती कार्रवाई पूरी करेगा। मुत्मइन होने के बाद क़ाज़ी खुद ही औरत का निकाह ख़त्म कर देगा। ऑल इन्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के ज़रीए मुल्क के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में दारुल-क़ज़ा (शरई अदालतें) क़ायम हैं, जहाँ मुस्लिम क़ाज़ी के पास इस सिलसिले में मुक़द्दमा दाख़िल किया जा सकता है।

कुछ बातें इद्दत के बारे में

इद्दत के बारे में कुछ बातों का ख़्याल रखना चाहिए–

जिस तरह एक तलाक़ या दो तलाक़ के बाद इद्दत होती है, जिसके बारे में पीछे कुछ बातें आ चुकी हैं, इसी तरह तीन तलाक़ के बाद भी इद्दत होती है। इद्दत गुज़ारना अल्लाह का हुक्म है। क़ुरआन में हुक्म दिया गया है—

> "इद्दत का ख़्याल रखो और अपने परवरदिगार से डरते रहो।" (क़ुरआन, 65:1)

इद्दत की मुद्दत गुज़ारने से पहले औरत की दूसरी शादी नहीं हो सकती है। एक तलाक़ या दो तलाक़ के बाद, जिसको 'रज़ई तलाक़' कहते हैं, इद्दत में औरत को शौहर फिर से अपनी बीवी बना सकता है। अगर पूरी इद्दत गुज़र जाती है तो दोबारा उस औरत से निकाह हो सकता है। लेकिन तीन तलाक़ों के बाद न तो इद्दत में और न ही इद्दत के बाद वह औरत दोबारा उस मर्द की बीवी बन सकती है। सिवाय इस इमकानी सूरत के जिसका बयान पीछे "तीन तलाक़ के बाद" में गुज़र चुका है।

इद्दत का ज़माना मर्द के घर में ही गुज़ारा जाता है और इस ज़माने का खाना-ख़र्चा भी मर्द देता है। इद्दत गुज़र जाने के बाद मर्द-औरत के बीच कोई ताल्लुक़ नहीं रह जाता है। इसलिए अब औरत का कोई नान-नफ़क़ा या गुज़ारा-भत्ता मर्द पर नहीं रहता है। इद्दत के बाद के लिए मर्द से गुज़ारा वग़ैरह लेना ऐसा ही है जैसे किसी अजनबी ग़ैर-मर्द से अपना गुज़ारा-भत्ता लिया जाए।

इद्दते-माहवारी (हैज़) वाली औरत के लिए मुकम्मल तीन माहवारी का वक़्त है। तीसरी माहवारी से पाक होते ही इद्दत ख़त्म हो जाती है। अगर हैज़ न आता हो तो तीन महीने इद्दत की मुद्दत है। लेकिन अगर तलाक़ के वक़्त औरत हमल (गर्भ) से है तो बच्चे की पैदाइश के साथ ही इद्दत ख़त्म होगी, चाहे बच्चे की पैदाइश तलाक़ के बाद कुछ ही दिनों में हो जाए या तीन माह से ज़्यादा में बच्चे की पैदाइश हो।